Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 GISRRJ | Volume 1 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

महाकवि भवभूति के नाटकों में वृत्तिविमर्श

डॉ0 वीरेन्द्र कुमार मौर्य
असि0 प्रोफेसर– संस्कृत विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय आलापुर,
अम्बेडकर नगर।

महाकवि भवभूति संस्कृत साहित्य में उत्कृष्ट नाटककार के रूप में परिगणित किए जाते हैं। मालतीमाधव, महावीरचरित और उत्तररामचरित इन तीनों नाटकों में उन्होंने अपनी योग्यता एवं विद्वत्ता को चरम रूप से प्रकट किया है। ये तीनों ही नाटक उनके नाटकीय प्रतिभा का सर्वोत्तम निदर्शन है। प्रस्तुत शोधपत्र में महाकवि भवभूति के नाटकों में प्रयुक्त वृत्तियों पर लेख प्रस्तुत किया गया है ।

नाटकीय कार्य– व्यापार का एक आवश्यक तत्व वृत्ति होता है जिससे नाटक अपने नटों के द्वारा विभिन्न कार्य – व्यापारों से अभिनीत किया जाता है। सामान्यतः नायकादि नटों के व्यापार अनेक प्रकार के होते हैं। उनमें नायकादि का मानसिक–वाचिक, और कायिक व्यापार वृत्ति कहलाता है।[1] ये नाटयवृत्तियाँ ही काव्य की जननी होती हैं जिससे कवि अपने काव्य की रचना करता है।

नाट्यवृत्तियाँ चार प्रकार की होती हैं–सात्त्वती, भारती, एवं आरभटी इसमेंसात्त्वती वृत्ति मानस व्यापार रूप, भारती वृत्ति वाचिक व्यापार रूप तथा कैशिकी एवं कैशिकी एवं आरभटी वृत्तियाँ कायिक व्यापार रूप होती हैं। नाट्य में सभी व्यापार रस, भाव एवं अभिनय से युक्त होते हैं। अतः ये वृत्तियाँ भी रस, भाव एवं अभिनय का अनुसरण करती हैं।[2] ये नाट्यवृतियाँ कवि के उज्जवल काव्यकीर्ति का आधार स्तम्भ होती हैं। महाकवि भवभूति ने अपनी नाट्यकला को उत्कृष्ट बनाने के लिए इन नाट्यवृत्तियों का प्रयोग अपनी तीनों नाट्यकृतियों (महावीरचरितम्, मालतीमाधवम् एवं उत्तररामचरितम्) में सम्यग्र पेण किया है जिसका विवेचन संक्षेप में यहाँ प्रस्तुत है–

सात्वती वृत्तिः मानसिक, वाचिक तथा कायिक अभिनयों द्वारा व्यक्त होने वाले वीर, शान्त, रौद्र, एवं अद्भुत रसों से सम्बन्द्ध, हर्ष व धैर्य से युक्त मानस व्यापार को ही सात्त्वती वृत्ति कहा गया हैं।[3] इस वृत्ति के चार अंग हैं– संलापक उत्थापक, सांघात्य तथा परिवर्तक। पात्रों में जब परस्पर नाना भाव एवं रसयुक्त गम्भीर उक्ति पायी जाती हैं, तो वहाँ 'संलापक' की स्थिति मानी जाती है। आचार्य भवभूति के 'महावीरचरित' नाटक में संलापक के कई उदाहरण विद्यमान है। श्रीराम एवं जमदग्नि के संवाद में सात्त्वती वृत्ति के संलापक का रूप द्रष्टव्य है[4] जहाँ एक पात्र को युद्ध के लिए उत्तेजित करता है, वहाँ 'उत्थापक' होता है[5]। मन्त्रशक्ति, अर्थशक्ति, दैवशक्ति आदि के द्वारा जब शत्रु के संघ का भेदन होता है , जो सांघात्यं ' होता है। जब आरम्भ किये गये किसी एक कार्य को छोड़कर दूसरे कार्य का सम्पादन किया जाए जो इसे ' परिवर्तक'[6] कहते है।

---

1 प्रवृत्तिरूपों नेतृव्यापारस्वभावो वृतिः। द. रू. 2 /77 नायकस्य व्यापारानुकूलः स्वभावो वृतिः (प्रभा)
2 रसभावाभिनयगाः ना.द. 3/155
3 नाट्यदर्पण 3/4
4 रामः (सधैर्यबहुमानं निर्वण्यं) अयं स कि यः पुरा सपरिवारकार्त्तिकेयविजयावर्जितेन भगवता नीललोहितेन सहस्र परिवत्सरान्ते वासिने तुभ्यं प्रसादीकृतः परशुः।
5 नाटयदर्पण 2/49
6 नाटयदर्पण 2/38

आचार्य भवभूति के महावीरचरित एवं मालतीमाधव के वीर, रौद्र आदि रसों क पूर्ण व्यापारों मे इस वृत्ति के निर्देशन प्रचुरता से मिलते हैं। महावीर चरित के भार्गव प्रसंग में धैर्य, व हर्ष आदि के कलात्मक मिश्रण ये युक्त नाटकीय व्यापार में, सात्तवती वृत्ति का उत्तम निर्देशन द्रष्ट्रव्य है। वस्तुतः सात्वती सत्व एवं आवेगपूर्ण प्रत्येक मानस– व्यापार में प्रस्फुटित होती है। मालती माधव के पंचम अंक में भी देवी चामुण्डा आदि के चित्रण में सात्वती वृति की प्रधानता दृष्टिगोचर होती है।

(2) **भारती वृत्ति**– नटों का संस्कृत भाषा में वाचिक भारती वृत्ति कहलाता है। इसमें कायिक या मानसिक व्यापार नहीं होता है। इसके चार अंग होते हैं– प्ररोचना, वीथी, प्रहसन, और आमुख[7] । महाकवि भवभूति के द्वारा प्रयुक्त यह वृत्ति तीनों कृतियों के आमुख में द्रष्टव्य हैं। भवभूति के आमुखों की भाषा केवल संस्कृत है।

(क) **प्ररोचना–** प्ररोचना से अभिप्राय किसी के मन को किसी ओर आकर्षित करना है। इसमें नाटक की प्रंशसा के द्वारा दर्शकों को अभिनय–प्रदर्शन की ओर उन्मुख किया जाता है।[8] अर्थात् प्रस्तुत काव्यार्थ की प्रंशसा करके श्रोताओं की प्रवृत्ति उसकी ओर कर देना ही प्ररोचना है। जैसे–

यं ब्रह्माणमियं देवी वाग्वश्येवानुवर्तते।
उत्तररामचरितं तत्प्रणीतं प्रयोक्ष्यते[9] ।।

अर्थात् वह देवी सरस्वती जिन ब्राह्मण (भवभूति) का वशवर्तिनी की तरह अनुसरण करती है, उन महाकवि भवभूति के द्वारा रचित उत्तररामचरित का अभिनय किया जाना है। इस श्लोक के द्वारा कवि अपने प्रकृष्ट पाण्डित्य की ओर संकेत करता है। अतः यहाँ प्ररोचना है। इसी तरह महावीरचरितम् में–

वश्यवाचः क्वैर्वाक्यं सा च रामाश्रया कथा।
लब्धश्च वाक्यनिष्यन्दनिष्पेषनिकषो जनः[10] ।।

(ख) वीथी– भारती वृत्ति के अगं वास्तव में इसके अंश है, क्योंकि वीथी और प्रहसन रूपक के दस भेदों में से हैं। इसलिए वीथी और प्रहसन को भारती वृत्ति का अंश मानते हैं। यह प्रस्तावना के उद्घात्यक आदि 13 अंगों से युक्त होती हैं। वीथी में एक यह दो पात्रों की योजना होती है। इसमें एक पात्र को आकाशभाषित द्वारा यह दो पात्रों की उक्ति प्रत्युक्ति द्वारा वस्तु विवरण दिया जाता है। यहाँ पर भवभूति के द्वारा अपनी नाट्यकृतियों में वीथी के 13 अगों में से अवलगित, वाक्केलि आदि वीथी के उदाहरण प्रस्तुत हैं–

(ग) अवलगित– जहाँ पर एक कार्य के बहाने से या एक कार्य के प्रस्तुत होने पर दूसरे कार्य की सिद्धि होती है तो वहाँ अवलगित वीथी होती है।[11] जैसे–

उत्तरामचरित के प्रथमांक में सीता को दोहद कार्य के बहाने से के ले जाकर लोकापवाद के कारण लक्ष्मण उसे वन में छोड़ देते हैं।

(घ) वाक्केलि– प्रारम्भ किए हुए आंकाक्षायुक्त वाक्य को रोक लेना अथवा कई बार की उक्ति प्रत्युक्ति करने पर वाक्केलि वीथी होती है। जैसे–

वासन्ती– त्वं जीवितं त्वमसि मे हृदयं द्वितीयं।
त्वं कौमुदी नयनयोरमृतं त्वमंड्गे।
इत्यादिभिः प्रियशतैरनुरूध्य मुग्धां

---

7 भारती संस्कृत वाग्व्यापारो नटाश्रयः।
भेदैः प्ररोचनायुक्तैर्वीथीप्रहसनामुखैः ।। द.रू. 3/5 सा. द. 6/29–30

8 उन्मुखीकरणं तत्रं प्रशंसातः प्ररोचना। द.रू. 3/6, सा.द. 6/30

9 उत्तरामचरितम्, 1/2

10 महावीरचरितम्, 1/4

11 द. रू. 3/14

तामेव शान्तमथवा किमतः परेण[12]।।

यहाँ पर वनदेवी वासन्ती सीता के साथ राम के बर्ताव का वर्णन करती हुइ कहतीं हैं कि तुमने तो सीता को 'तुम मेरा जीवन हो ' आदि मधुर वचनों को कहकर अपने प्रति अनुरक्त एवं विश्वस्त कर लिया, पर आपने उसके साथ तदनुरूप व्यवहार नहीं किया। शान्त हो .... इस प्रकार राम के विषय में कुछ भी कहने से क्या लाभ?

क्योंकि उन्हें जो कुछ करना था वे कर चुके हैं। इसलिए उनके विषय में मौन रहना ही ठीक है। अतएव यहाँ वीथी का वाक्केलि अङ्ग हैं।

(ङ)गण्ड– जब भिन्न अर्थ वाला होने पर भी प्रस्तुत से सम्बन्ध हो सकने वाला वाक्य अकस्मात् कह दिया जाता है, तो वहाँ पर गण्ड नामक वीथ्यंग होता है[13]। जैसे–
उत्तरामचरित के प्रथमांक में –
रामः– इयं गेहे लक्ष्मीरियमृतवर्तिर्नयनयो–

रसावकरयाः स्पर्शो वपुषि बहारश्चन्दनरसः।
अयं बाहुः कण्ठे शिशिरमसृणो मौक्तिकसरः
चित्ररगा न प्रेयो यदि परगराहरारतु विरहः[14]।।
(प्रविश्य) प्रतिहारी – देव उपस्थितः।

यहाँ पर प्रतिहारी का वचन अन्यार्थक है, अर्थात् दुर्मुख के आगमन की सूचना देने वाला है। किन्तु उसका राम के प्रति वचन से भी सम्बन्ध हो जाता है। राम ने जो कहा है– ' यदि परमसह्यास्तु विरहः'। इस कथन का 'उपस्थितः (विरहः उपस्थितः)' से सम्बन्ध जुड़ जाता है अतः गण्ड वीथ्यंग है।

(ग) **प्रहसन–** प्रहसन को भी वीथ्यंग न मानकर अंश माना क्योंकि यह रूपक भेदों में से एक है। यह भाग के समान होता है। यह शुद्ध, वैकृत एवं संकर भेद से तीन प्रकार का होता है– **तद्वत्प्रहसंन त्रेधा शुद्धवैकृतसकरैः द. रू. 3/55** जिसमें पाखण्डी आदि में से किसी एक चरित्र को प्रकट करते हैं तो विकृत तथा जिसमें अनेक धूतों का चरित्र वर्णित किया गया हो, तो संकर प्रहसन होता हैं।

भवभूति की तीनों कृतियों में हास्य (प्रहसन) का अभाव है। भवभूति स्वभाव से संयमी एंव गम्भीर थे जो सस्ते हास्य को अपनी गम्भीरता का दूषण मानते थे। इसीलिए उन्होंने अपने नाटकों में हास्य जैसे पात्र विदूषक की कल्पना नहीं की। उनका मानना था कि हास्य कितना भी शिष्ट क्यों न हो, वह प्रायः जीवन के ऊपरी सतह पर ही रहता है, भीतर नहीं। इस सम्बन्ध में प्रो. विल्सन का विचार है कि ''व्यक्ति जितना ही गम्भीरता से सोचता है उतना ही तथ्यों पर अधिक ध्यान देता है और हास्य में वह उससे कम दक्ष होता है[15] इसीलिए गम्भीर कृतियों में हास्य का अभाव मिलता है। अतएव भवभूति ने भी अपने नाटकों में इसका समावेश नहीं किया। उन्होंने अपनी कृतियों में कहीं– कहीं पर यदा कदा शिष्ट हास्यात्मक उद्गार व्यक्त किए हैं। जैसें–
उत्तररामचरित के प्रथमांक में चित्र–दर्शन में उर्मिला के चित्र दर्शन पर सीता का लक्ष्मण से कथन में हास्योत्पत्ति–
सीता– वत्स, इयमप्यपरा का[16]

---

12 उत्तररामचरितम्, 3/26

13 गण्डः प्रस्तुतसम्बन्धिभिन्नार्थं सहसोदितम् । द.रू. 3/21, सा.द. 6/260, ना.शा. 18 पृ. 458

14 उत्तररामचरितम् 1/38

15 प्रो. विल्सस– *जींज जीम उवतम कममचसल ं उंद मिमसेए जीम उवतम चतवदम ीम पे जीम सववा ंज बिजे ंदक जीम समे इसम जव ीनउवनत वत रमेजण*

16 उत्तरामचरित के प्रथमांक मे 18 वे छन्द के बाद का गद्यांश

उत्तरामचरित में ही घोड़ा वर्णन– प्रसंग में भोले वटुओं की निश्छल अभिव्यक्ति में हास्योत्पति– पश्चात्पुच्छं वहति– पुनर्दूरगेहो हि यागः[17]
मालतीमाधव में मालती के वेष को धारण किये मकरन्द से माधव के कटाक्ष में भी हास्योत्पत्ति होती है–भगवति, कृतपुण्य एंवम् नन्दनो यः प्रियामीदृशी कामयिष्यते।

इस प्रकार महाकवि ने हास्य के अभाव को दर्शकों के सम्मुख खटकने नहीं **दिया।**
(घ) **आमुख–** जहाँ पर सूत्रधार विचित्र उक्ति के द्वारा नहीं पारिपार्श्विक या विदूषक को प्रस्तुत का आक्षेप करने वाला अपना कार्य बताता है वह आमुख (प्रस्तावना) है[18] । यह कथोद्घात, प्रवृत्तक, प्रयोगातिशय तथा वीथी के 13 अगों सहित 16 अगों से युक्त होती है जिसमें से कथोद्धात में पात्र अपनी कथावस्तु से समानता रखने वाले सूत्रधार के वाक्य या वाक्यार्थं को लेकर प्रविष्ट होता है, वहाँ कथोद्घात होता है।

जहाँ काल (ऋतु वसन्तादि) के वर्णन की समानता के द्वारा पात्र के प्रवेश की सूचना दी जाती है, वहाँ **प्रवृत्तक** होता है। जहाँ पर सूत्रधार अपने आरम्भ किए हुए प्रस्तावना को छोड़कर नाट्य प्रयोग का निर्देश कर देता है और उससे पात्र का प्रवेश हो जाता है, वहाँ प्रयोगातिशय आमुखाग होता है यहाँ पात्र–प्रवेश से पहले वाला अंश आमुख है[19]।

इस प्रकार भवभूति ने वाग्व्यवहार प्रधानता वाली भारती वृत्ति का अंगों सहित अपनी कृतियों में सम्यक् प्रयोग किया है। चूँकि भारती वृत्ति की भाषा संस्कृत होती है जिसे भवभूति ने अपने नाटकों की प्रस्तावना या आमुख में प्रयोग किया है।

कैशिकी वृत्तिः–

दशरूपककार के अनुसार, गीत, नृत्य, विलास आदि श्रृंगारपूर्ण चेष्टाओं के के कारण ' कैशिकी वृत्ति' कोमल होती है इसमें शिष्ट हास्य– परिहास तथा हास्य– परिहास तथा काम व्यवहारादि का अन्तर्भाव होता है। लम्बे केशादि से युक्त होना नारी का लक्षण है। चूँकि इस वृत्ति में नारियों की चेष्टाओं का प्राधान्य होता है, अतः इसे ' कैशिकी' की संज्ञा प्रदान की गई है। कैशिकी के चार अंग माने गये हैं– नर्म, नर्म स्फिंज, नर्मस्फोट तथा नर्मगर्भ। भवभूति के मालतीमाधव नाटक में कैशिकी वृत्ति के इन चारों अंगों का बखूबी निदर्शन किया गया है। प्रिया के चित्त को प्रसन्न करने वाला,, माधव का विलासपूर्ण व्यापार 'नर्म का ही उदाहरण है परन्तु बाद में कामन्दकी के द्वारा मालती का भेद खुल जाने की आशा व्यक्त करता 'नर्म स्फिंज [20] की श्रेणी में आता है। मालतीमाधव के प्रथम अंक में मकरन्द के कथन द्वारा लेशमात्र भावों द्वारा श्रृंगार रस के सूचना –व्यापार में 'नर्म स्फोट' की सत्ता दिखाई देती है।[21] तथा षष्ठ अंक में देवी मन्दिर के भीतर लंवगिका के स्थान पर माधव का चोरी छिपे प्रवेश तथा मालती द्वारा अनजाने ही उसका गाढ़ आलिगन करना ' नर्म गर्भ ' का श्रेष्ठ उदाहरण कहा जा सकता है।

---

17 उत्तरारामचरित, 4/26

18 सूत्रधारो नटीं ब्रूते मार्षं वाऽथ विदूषकम्।

19 2 दे.रू. 3/12, सा.द. 6/3, ना. शा. 20/36

20 माधवः– अयि स्वचित्तवेदनामांत्रदिनि परव्यसनानभिज्ञ, इयमुपालभयसे।
उद्दादेहपरिदाह महाज्वराणि
संकल्पसंगमविनोदितवेदनानि।
त्वत्वस्हसंविदवलम्बित जीवितानि,
किं वा मयापि न दिवास्प वाहितानि। मा. मा. 6/13

21 कामन्दकी– (प्रविश्य) पुत्रि कातरे, किमेतत्।
(मालती कम्पमाना कामन्दकीमालिङ्.गति)
कामन्दकी– (तस्याः चिबुकमुन्नयमय्य) वत्सें।
पुरश्चक्षुराग .....सकामोऽस्तु मदनः मा.मा.6/14

आरभटी– वृत्ति भी स्थायी एवं व्यभिचारी भावों से युक्त कायिक, वाचिक, मानसिक, सभी प्रकार के अभियानों से युक्त सब प्रकार के व्यापारों वाली होती है। इसके भी चार भेद हैं– संक्षिप्तिका, सम्फेट, वस्तूत्थापन तथा अवपातन। एक नायक के निवृत्त होने पर दूसरे नायक का आना अथवा एक ही नायक द्वारा एक अवस्था को छोड़कर दूसरी अवस्था को ग्रहण करना ही' संक्षिप्तिका' है। महावीरचरित में बाली की निवृत्ति हो जाने पर सुग्रीव का नायक के रूप में होना [22] तथा परशुराम का औद्धत्य समाप्त होने पर' पुण्या ब्राह्मणजातिः' इस प्रकार शान्तत्व को ग्रहण करना[23] संक्षिप्तिका के उदाहरण हैं। मालतीमाधव के पंचम अगं में माधव एवं अघोरघण्ट द्वारा परस्पर निन्दित व अपमानित करने के प्रसंग में 'सम्फेट' की स्थिति है। [24] महावीरचरित के षष्ठ अंक में श्रीराम के साथ युद्ध करता हुआ माया शक्ति के द्वारा अपने कटे हुए सिर के बदले जब पुनः अनन्त सिर प्रकट कर देता है[25] वहाँ वस्तूत्थापन कहा जा सकता है। मालतीमाधव के तृतीय अकं में लोहे, के पिजड़े को तोड़ने वाले बाघ के भंयकर आक्रमण की सूचना दी जाती है, उसके कारण लोगों में भगदड़ मच जाना, अवपातन का ही उदाहरण है।

इस प्रकार नाटकीय के विविध रूपों में ही विविध वृत्तियों की कल्पना की गई है। ये वृत्तियाँ शब्दागत एवं अर्थगत दोनो ही होने के कारण, विविध रसों के साथ इनका स्वभावतः ही सम्बन्ध हो जाता है।

धनिक के अनुसार कैशिकी वृत्ति का प्रयोग श्रृंगार में, सात्त्वती–वृत्ति का प्रयोग वीर रस में तथा आरभटी वृत्ति का प्रयोग रौद्र एवं वीभत्स रसों में पाया जाता है। भारती वृत्ति, शब्द वृत्ति होने के कारण उसकी स्थिति सभी रसों में पाई जाती है।[26] आचार्य भवभूति का मालतीमाधव नाटकीय कार्य–व्यापार की विविध शैलियों की दृष्टि से विशेषतः प्रचुर सम्पन्न है। वैसे उनके तीनों ही नाटकों में नाटकीय कार्य–व्यापारों की ऐसी प्रचुरता एवं विविधता प्राप्त होती है कि उनमें सभी वृत्तियों का सागोपांग रूप से समाहार हो जाता है।

22 मालतीमाधव, पृ. 152–155

23 महावीरचरितम् 5/55

24 मालतीमाधव 5/28–32

25 एताभ्यां राघवाभ्यां. पत्त्रिणोऽपि। महा. च.6/61

26 दशरूपक 2/62